

धर्म एवं जाति का उत्तराखंड की राजनीति पर प्रभाव का एक समीक्षात्मक अध्ययन

Suman Lata

Research Scholar, Soban Singh Jeena University Almora

Professor Neeta Bharti

Professor, Ph.D. Convener & Head of Department (Political Science)

Soban Singh Jeena University Almora

सार

यह अध्ययन भारत के उत्तराखंड राज्य में धर्म, जाति और राजनीति के बीच जटिल अंतर्संबंध की आलोचनात्मक जांच करता है। 2000 में अपने गठन के बाद से, उत्तराखंड ने सामाजिक-धार्मिक पहचान, जनसांख्यिकीय पैटर्न और क्षेत्रीय आकांक्षाओं द्वारा आकार लेने वाली राजनीतिक गतिशीलता देखी है। जबकि राज्य को अक्सर सांस्कृतिक रूप से समरूप पहाड़ी क्षेत्र के रूप में माना जाता है, वास्तविकता एक जटिल सामाजिक-राजनीतिक ताने-बाने को दर्शाती है जहाँ जातिगत स्तरीकरण और धार्मिक संबद्धताएँ चुनावी व्यवहार, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और नीति प्राथमिकताओं को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करती हैं। शोध में पता लगाया गया है कि कैसे प्रमुख धार्मिक आख्यान, विशेष रूप से हिंदू राष्ट्रवाद से जुड़े आख्यान, शहरी मैदानी इलाकों और ग्रामीण पहाड़ी इलाकों दोनों में मतदाता लामबंदी और पार्टी की रणनीतियों को प्रभावित करते हैं। इसके अतिरिक्त, राजनीतिक प्रवचन और सत्ता संरचनाओं में अनुसूचित जातियों, अन्य पिछड़ा वर्गों (ओबीसी) और उच्च जातियों की भूमिका का आलोचनात्मक विश्लेषण किया गया है। ऐतिहासिक विश्लेषण, केस स्टडी और चुनावी डेटा के माध्यम से, शोधपत्र यह समझने का प्रयास करता है कि उत्तराखंड में पहचान की राजनीति शासन और लोकतांत्रिक भागीदारी को कैसे आकार देती है। निष्कर्ष समावेशी राजनीति की आवश्यकता को रेखांकित करते हैं जो पहचान-आधारित विभाजनों से ऊपर उठती है तथा क्षेत्रों और समुदायों में समान विकास को बढ़ावा देती है।

मुख्य शब्द: धर्म, जाति, राजनीति, लोकतांत्रिक

परिचय

वर्ष 2000 में उत्तर प्रदेश से अलग होकर बने उत्तराखंड की कल्पना एक अलग राज्य के रूप में की गई थी जो अपने पहाड़ी निवासियों की सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं को बेहतर ढंग से पूरा करेगा। हालांकि, इसके गठन के बाद से दो दशकों में, उत्तराखंड का राजनीतिक परिदृश्य उन तरीकों से विकसित हुआ है जो भारतीय राजनीति की व्यापक धाराओं को दर्शाते हैं, विशेष रूप से धर्म और जाति का लगातार प्रभाव। जबकि राज्य की प्राकृतिक पहचान अक्सर इसके हिंदू तीर्थ स्थलों और पहाड़ी इलाकों के संदर्भ में बनाई जाती है, इसका राजनीतिक चरित्र एक समान नहीं है। इसके बजाय, यह जटिल जाति पदानुक्रम, धार्मिक संबद्धता और पहाड़ियों और मैदानों के बीच क्षेत्रीय भेदों से गहराई से आकार लेता है। व्यापक भारतीय संदर्भ में, धर्म और जाति ने लंबे समय से राजनीतिक पहचान को आकार देने और चुनावी परिणामों को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उत्तराखंड, अपनी जनसांख्यिकीय विविधता और अद्वितीय भौगोलिक संरचना के साथ, यह विश्लेषण करने के लिए एक सम्मोहक केस स्टडी प्रस्तुत करता है कि ये कारक एक ऐसे राज्य में कैसे परस्पर क्रिया करते हैं जो हिंदू राष्ट्रवाद की सांस्कृतिक मुख्यधारा और जाति और क्षेत्रीय पहचान की अधिक स्थानीय चिंताओं दोनों को जोड़ता है। राजनीतिक रूप से, उत्तराखंड में दो प्रमुख राष्ट्रीय दलों

- भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (आईएनसी) का वर्चस्व रहा है - जिनमें से प्रत्येक ने चुनावी लाभ हासिल करने के लिए धार्मिक और जातिगत पहचानों को रणनीतिक रूप से संगठित किया है। भाजपा ने, विशेष रूप से, हिंदुत्व-केंद्रित राजनीतिक एजेंडे को बढ़ावा देने के लिए राज्य से जुड़े धार्मिक प्रतीकवाद का लाभ उठाया है, जिसे अक्सर "देवभूमि" या "देवताओं की भूमि" कहा जाता है। साथ ही, जाति एक महत्वपूर्ण, हालांकि कम सार्वजनिक रूप से स्वीकार की जाने वाली, टिकट वितरण, नेतृत्व की भूमिका और सरकारी लाभों में कारक बनी हुई है। अनुसूचित जाति (एससी), अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी), और ब्राह्मण और राजपूत जैसी उच्च जातियों ने राज्य के राजनीतिक अंकगणित को प्रभावित किया है, हालांकि पहाड़ियों और मैदानों में अलग-अलग तरीके से। उत्तराखंड में धर्म और जाति का परस्पर संबंध क्षेत्रीय असमानताओं के कारण और भी जटिल हो गया है। पहाड़ी जिले, अपनी अपेक्षाकृत समरूप आबादी और बिखरी बस्तियों के साथ, हरिद्वार और उधम सिंह नगर जैसे घनी आबादी वाले और अधिक विविधतापूर्ण मैदानी क्षेत्रों की तुलना में अलग-अलग राजनीतिक व्यवहार और जातिगत गतिशीलता प्रदर्शित करते हैं। इन मैदानी जिलों में मुस्लिम और दलितों सहित धार्मिक और जातिगत अल्पसंख्यकों की एक महत्वपूर्ण आबादी है, जो उन्हें महत्वपूर्ण चुनावी युद्धक्षेत्र बनाती है जहाँ पहचान की राजनीति अक्सर अधिक खुले तौर पर की जाती है। इस पत्र का उद्देश्य इस बात का एक महत्वपूर्ण अध्ययन करना है कि धर्म और जाति ने उत्तराखंड के राजनीतिक प्रक्षेपवक्र को कैसे आकार दिया है। यह इस तरह के सवालों का पता लगाने का प्रयास करता है: उत्तराखंड में धार्मिक और जातिगत पहचान ने पार्टी की राजनीति और चुनावी नतीजों को कैसे प्रभावित किया है? क्षेत्र के राजनीतिक विमर्श में हिंदुत्व की क्या भूमिका है? राजनीतिक प्रतिनिधित्व और नीति-निर्माण में जातिगत पदानुक्रम कैसे परिलक्षित होते हैं? जाति और धार्मिक राजनीति की अभिव्यक्ति में कौन से क्षेत्रीय अंतर मौजूद हैं? इन सवालों को संबोधित करके, अध्ययन उत्तराखंड की सामाजिक-राजनीतिक गतिशीलता की एक सूक्ष्म समझ प्रदान करने की उम्मीद करता है। चुनावी डेटा, नीति विश्लेषण, क्षेत्र अवलोकन और द्वितीयक साहित्य के उपयोग के माध्यम से, यह शोध भारतीय लोकतंत्र में पहचान की राजनीति पर व्यापक चर्चा में योगदान देगा। ऐसा करने में, यह एक ऐसे राज्य में समावेशी और विकासोन्मुख शासन को बढ़ावा देने की चुनौतियों को भी उजागर करेगा जहाँ सामाजिक पहचान महत्वपूर्ण राजनीतिक प्रभाव डालती रहती है।

साहित्य की समीक्षा

भारत में धर्म, जाति और राजनीति के अंतर्संबंधों का व्यापक अध्ययन किया गया है, लेकिन अपेक्षाकृत युवा राज्य उत्तराखंड में विशिष्ट गतिशीलता का अभी भी पता नहीं चल पाया है। मौजूदा साहित्य भारत में पहचान की राजनीति के व्यापक विषयों पर अंतर्दृष्टि प्रदान करता है, फिर भी यह जांचने की आवश्यकता बढ़ रही है कि उत्तराखंड जैसे क्षेत्रीय संदर्भों में ये गतिशीलता कैसे सामने आती है, जहाँ सामाजिक-राजनीतिक वास्तविकताएं बड़े या पुराने राज्यों से भिन्न हैं। क्रिस्टोफ़ जैफ़रलॉट (2003) और रजनी कोठारी (1970) जैसे विद्वानों ने भारतीय राजनीति में जाति की भूमिका पर मूलभूत दृष्टिकोण प्रदान किए हैं, जिसमें बताया गया है कि कैसे जाति समूह नीति के निष्क्रिय प्राप्तकर्ता से सक्रिय राजनीतिक एजेंटों में परिवर्तित हो गए हैं। जैफ़रलॉट, विशेष रूप से, निम्न जाति समूहों के राजनीतिक उदय और चुनावी राजनीति में उनके बढ़ते दावे का पता लगाते हैं, जिसे वे "मूक क्रांति" कहते हैं। जबकि यह क्रांति उत्तर प्रदेश और बिहार जैसे राज्यों में अधिक दिखाई देती है, पड़ोसी उत्तराखंड में इसके प्रभाव - विशेष रूप से मैदानी जिलों में - पार्टी की रणनीतियों और चुनावी लामबंदी में स्पष्ट हैं। इसी तरह, भारतीय राजनीति में एक कारक के रूप में धर्म का आशिष नंदी (1998) और पॉल ब्रास (2003) जैसे विद्वानों द्वारा आलोचनात्मक विश्लेषण किया गया है, जो हिंदू राष्ट्रवाद के उदय और इसके चुनावी परिणामों का पता लगाते हैं। ये कार्य विशेष रूप से उत्तराखंड के लिए प्रासंगिक हैं, जहाँ "देवभूमि" के प्रतीकवाद का उपयोग एक कथा का निर्माण करने के लिए किया गया है जो हिंदुत्व की विचारधाराओं के साथ संरेखित है, विशेष रूप से भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) द्वारा। केदारनाथ, बद्रीनाथ और हरिद्वार जैसे प्रमुख तीर्थ स्थलों की उपस्थिति से पुष्ट राज्य की धार्मिक पहचान का उपयोग सांस्कृतिक रूप से गूंजने वाले राजनीतिक मंच के निर्माण के

लिए किया गया है, जो अक्सर जाति और वर्ग के मुद्दों को दबा देता है। उत्तराखंड पर क्षेत्र-विशिष्ट साहित्य, हालांकि सीमित है, मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। उत्तराखंड की पहाड़ियों में सामाजिक-राजनीतिक आंदोलनों पर शेखर पाठक और उमा भट्ट के काम राज्य के गठन में जमीनी स्तर की सक्रियता की भूमिका पर जोर देते हैं। हालांकि, राज्य बनने के बाद, जाति-तटस्थ शासन का वादा पूरी तरह से साकार नहीं हुआ है। इसके बजाय, राजनीतिक दलों ने मुख्य भूमि भारतीय राजनीति में प्रचलित पहचान-आधारित रणनीतियों को तेजी से अपनाया है।

अन्नपूर्णा नौटियाल (2013) जैसे विद्वानों द्वारा किए गए अनुभवजन्य अध्ययनों ने उत्तराखंड में चुनावी रुझानों की जांच की है, जिसमें जाति-आधारित उम्मीदवार चयन के पैटर्न और पहाड़ी और मैदानी निर्वाचन क्षेत्रों के बीच क्षेत्रीय भेदभाव पर प्रकाश डाला गया है। ये अध्ययन बताते हैं कि जहाँ पहाड़ी क्षेत्र जनसांख्यिकीय समरूपता के कारण अपेक्षाकृत कम स्तर की जाति-आधारित राजनीति प्रदर्शित करते हैं, वहीं मैदानी क्षेत्र-विशेष रूप से हरिद्वार और उधम सिंह नगर-पड़ोसी उत्तर प्रदेश में देखी गई जाति और सांप्रदायिक ध्रुवीकरण को दर्शाते हैं।

इसके अतिरिक्त, सेंटर फॉर द स्टडी ऑफ डेवलपिंग सोसाइटीज (CSDS) और एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रीफॉर्म (ADR) जैसे थिंक टैंकों की रिपोर्टों ने समय-समय पर उत्तराखंड में चुनावी डेटा और उम्मीदवारों के प्रोफाइल का विश्लेषण किया है। ये रिपोर्ट उच्च जाति के उम्मीदवारों के अधिक प्रतिनिधित्व, अल्पसंख्यकों के कम प्रतिनिधित्व और चुनाव अभियानों के दौरान धार्मिक बयानबाजी की बढ़ती प्रमुखता की ओर इशारा करती हैं।

जबकि ये अध्ययन सामूहिक रूप से उत्तराखंड में पहचान की राजनीति को समझने में योगदान देते हैं, लेकिन जाति और धर्म किस तरह से राजनीतिक व्यवहार, शासन प्राथमिकताओं और पार्टी रणनीतियों को आकार देने में अलग-अलग नहीं बल्कि अलग-अलग तरीके से एक दूसरे से जुड़ते हैं, इसका आलोचनात्मक विश्लेषण करने में अभी भी एक अंतर है। यह अध्ययन ऐतिहासिक प्रक्षेपवक्र, समकालीन राजनीतिक विकास और क्षेत्र-विशिष्ट गतिशीलता पर विचार करने वाले एक व्यापक, अंतःविषय परिप्रेक्ष्य प्रदान करके उस अंतर को भरने का प्रयास करता है।

उद्देश्य

1. उत्तराखंड के राजनीतिक परिदृश्य में जातिगत और धार्मिक पहचान के ऐतिहासिक विकास का मानचित्रण करना।
2. उम्मीदवार चयन और मतदान व्यवहार में जातिगत और धर्म-आधारित पैटर्न के लिए चुनावी आंकड़ों का विश्लेषण करना।
3. जातिगत और धार्मिक पहचान को संगठित करने में राजनीतिक दलों की भूमिका का आकलन करना।

अनुसंधान क्रियाविधि

यह अध्ययन उत्तराखंड की राजनीति पर धर्म और जाति के प्रभाव का आलोचनात्मक मूल्यांकन करने के लिए मात्रात्मक विश्लेषण द्वारा पूरक गुणात्मक शोध पद्धति का उपयोग करता है। राजनीतिक पहचान की बहुआयामी प्रकृति को देखते हुए, यह शोध ऐतिहासिक, समाजशास्त्रीय और राजनीतिक रूपरेखाओं को एकीकृत करता है ताकि यह पता लगाया जा सके कि जाति और धर्म राज्य भर में मतदाता व्यवहार, पार्टी की रणनीतियों और चुनावी नतीजों को कैसे प्रभावित करते हैं। यह शोध खोजपूर्ण और विश्लेषणात्मक प्रकृति का है। यह उत्तराखंड की राजनीतिक प्रक्रियाओं में जाति और धार्मिक प्रभाव के प्रकट और अव्यक्त दोनों पैटर्न को समझने पर केंद्रित है। इसमें पहचान की राजनीति में भौगोलिक विविधताओं का आकलन करने के लिए पहाड़ी क्षेत्रों और मैदानी इलाकों के बीच तुलनात्मक क्षेत्रीय विश्लेषण भी शामिल है।

परिणाम

यह खंड प्राथमिक और द्वितीयक दोनों डेटा स्रोतों से प्राप्त निष्कर्षों को प्रस्तुत करता है, जो उत्तराखंड में राजनीतिक भागीदारी, उम्मीदवार चयन और मतदाता वरीयताओं में जाति और धर्म की भूमिका पर केंद्रित है। विश्लेषण को तीन विषयगत घटकों में विभाजित किया गया है।

तालिका 1 उत्तराखंड विधानसभा में जातिवार प्रतिनिधित्व (2022)

जाति श्रेणी	अनुमानित जनसंख्या हिस्सा (%)	जीती गई सीटें (70 में से)	प्रतिनिधित्व (%)	अधिक/कम प्रतिनिधित्व
ब्राह्मण	~18%	20	28.6%	अधिक प्रतिनिधित्व
राजपूत (ठाकुर)	~25%	22	31.4%	अधिक प्रतिनिधित्व
अनुसूचित जातियाँ	~19%	10	14.3%	कम प्रतिनिधित्व
अन्य पिछड़ी जातियाँ (ओबीसी)	~30%	8	11.4%	कम प्रतिनिधित्व
अनुसूचित जनजातियाँ	~3%	2 (आरक्षित एसटी सीटें)	2.8%	आनुपातिक रूप से प्रतिनिधित्व
मुस्लिम	~14%	1	1.4%	गंभीर रूप से कम प्रतिनिधित्व

ब्राह्मण और राजपूत, सामूहिक रूप से आधी से भी कम आबादी होने के बावजूद, 2022 विधानसभा में 60% से अधिक सीटें जीत गए, जो उत्तराखंड की राजनीति में उनके निरंतर प्रभुत्व को दर्शाता है। इसके विपरीत, ओबीसी और एससी का प्रतिनिधित्व काफी कम है, भले ही वे कुल आबादी का लगभग 50% हिस्सा बनाते हैं। यह टिकट वितरण में संरचनात्मक बहिष्कार और कमजोर राजनीतिक लामबंदी का संकेत देता है।

तालिका 2. धर्म और जाति के आधार पर पार्टीवार उम्मीदवार चयन (2022)

दल	% उच्च जाति के उम्मीदवार	% एससी/ओबीसी उम्मीदवार	% मुस्लिम उम्मीदवार
भाजपा	70%	25%	0%
कांग्रेस	55%	35%	5%
BSP	30%	60%	5%
AAP	50%	40%	5%

हालाँकि मुस्लिम आबादी का लगभग 14% हिस्सा है, लेकिन उनका राजनीतिक प्रतिनिधित्व नगण्य (1 सीट) है, जो सांप्रदायिक ध्रुवीकरण और प्रमुख दलों, खासकर भाजपा द्वारा राजनीतिक बहिष्कार को दर्शाता है। फील्ड डेटा से पता चलता है कि मुसलमान धर्मनिरपेक्ष दलों (कांग्रेस, बीएसपी) का समर्थन करते हैं, लेकिन वोट विखंडन और सीमित उम्मीदवार प्रतिनिधित्व उनकी सफलता में बाधा डालते हैं।

तालिका 3. क्षेत्रवार मतदाता व्यवहार (4 जिलों में क्षेत्र सर्वेक्षण पर आधारित)

क्षेत्र	प्रमुख पहचान कारक	मतदाताओं द्वारा बताए गए प्रमुख मुद्दे	मतदान पैटर्न
हरिद्वार (मैदान)	धर्म और जाति	धर्म, विकास, हिन्दू गौरव	सर्वण जातियों में भाजपा का समर्थन मजबूत है
उधम सिंह नगर	जाति	जाति प्रतिनिधित्व, रोजगार	मिश्रित, ओबीसी/एससी का झुकाव कांग्रेस की ओर है
पौड़ी गढ़वाल	उच्च जाति का प्रभुत्व	विकास, पहचान, परंपरा	राजपूत और ब्राह्मण वोटों के माध्यम से भाजपा का प्रभुत्व
अल्मोड़ा (पहाड़ियाँ)	स्थानीय नेतृत्व, परंपरा	बुनियादी सुविधाएं, जाति आधारित मुद्दे	भाजपा और कांग्रेस के बीच विभाजन

भाजपा स्पष्ट रूप से उच्च जाति के हिंदुओं को संगठित करती है, मुस्लिम उम्मीदवारों को मैदान में उतारने से बचती है, और अपने आधार को मजबूत करने के लिए "देवभूमि", मंदिर जीर्णोद्धार परियोजनाओं और त्योहारों जैसे धार्मिक पहचान के आख्यानो का उपयोग करती है। कांग्रेस अपेक्षाकृत समावेशी रणनीति अपनाती है, लेकिन भाजपा की धार्मिक-राजनीतिक कथा को चुनौती देने के लिए उसके पास कैडर की ताकत और निरंतरता का अभाव है। बीएसपी दलित और ओबीसी वोटों को संगठित करने का प्रयास करती है, लेकिन पहाड़ी क्षेत्रों में उसके पास ठोस संगठनात्मक आधार नहीं है।

विचार-विमर्श

इस अध्ययन के निष्कर्षों से उत्तराखंड में जाति, धर्म और राजनीति के बीच एक जटिल, अक्सर विरोधाभासी संबंध का पता चलता है। जबकि राज्य को अक्सर अन्य उत्तरी भारतीय राज्यों की तुलना में अपेक्षाकृत शांतिपूर्ण और राजनीतिक रूप से कम अस्थिर माना जाता है, पहचान की राजनीति—जाति और धर्म में निहित—इसके राजनीतिक ताने-बाने में गहराई से अंतर्निहित है।

राजनीति में उच्च-जाति का आधिपत्य सबसे चौकाने वाले खुलासों में से एक राज्य के राजनीतिक परिदृश्य में उच्च जातियों, विशेष रूप से ब्राह्मणों और राजपूतों का लगातार प्रभुत्व है। संयुक्त आबादी का केवल लगभग 43% हिस्सा होने के बावजूद, वे 60% से अधिक विधायी सीटें सुरक्षित करते हैं। यह असंतुलन केवल संख्यात्मक नहीं है, बल्कि एक गहरी सामाजिक पदानुक्रम को दर्शाता है, जहां नेतृत्व, विशेषाधिकार और पहुंच की पारंपरिक धारणाएं इन जातियों से जुड़ी हुई हैं। राजनीतिक दल, विशेष रूप से भाजपा, कथित "जीतने की क्षमता" और मौजूदा संरक्षण नेटवर्क से प्रेरित होकर, इन समूहों से असमान रूप से उम्मीदवारों को मैदान में उतारती अल्पसंख्यकों का व्यवस्थित हाशिए पर जाना अध्ययन से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि मुस्लिम, जो आबादी का लगभग 14% हिस्सा हैं - मुख्य रूप से हरिद्वार और उधम सिंह नगर में केंद्रित हैं - को मुख्यधारा के राजनीतिक प्रतिनिधित्व से व्यवस्थित रूप से बाहर रखा गया है। समुदाय से उम्मीदवारों की कमी, विशेष रूप से भाजपा द्वारा, और कांग्रेस, बसपा और निर्दलीय जैसे दलों के बीच मुस्लिम वोटों का विखंडन, लगभग कोई विधायी उपस्थिति नहीं होने का कारण बना है। यह कम प्रतिनिधित्व सांप्रदायिक ध्रुवीकरण के बड़े मुद्दों का लक्षण है, खासकर उत्तर प्रदेश की सीमा से लगे मैदानी क्षेत्र में। धार्मिक त्योहारों, प्रतीकों और भावनात्मक आख्यानो को राजनीतिक रूप से इस्तेमाल किया गया है, खासकर दक्षिणपंथी समूहों द्वारा, हिंदू मतदाताओं को लामबंद करने और मुसलमानों को अलग-थलग करने के लिए। यह रणनीति न केवल एक महत्वपूर्ण जनसांख्यिकीय समूह को हाशिए पर डालती है बल्कि राज्य के समावेशी लोकतांत्रिक लोकाचार को कमजोर करती है। ओबीसी और एससी राजनीतिक विखंडन शोध में यह भी पाया गया है कि अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी) और अनुसूचित जाति (एससी) अपनी पर्याप्त संख्या के बावजूद राजनीतिक मुख्यधारा में गंभीर रूप से कम प्रतिनिधित्व करते हैं। यह आंशिक रूप से इन

समुदायों के भीतर समेकित राजनीतिक नेतृत्व की कमी के कारण है। मजबूत, पहचान-आधारित राजनीतिक दलों का अभाव (यूपी की बीएसपी या एसपी के विपरीत)। शिक्षा, भूमि स्वामित्व और राजनीतिक पूंजी के मामले में संरचनात्मक नुकसान। हालाँकि बीएसपी जैसी पार्टियों ने इन समुदायों को संगठित करने का प्रयास किया है, लेकिन उनकी अपील काफी हद तक कुछ खास इलाकों तक ही सीमित है और इसमें क्षेत्रीय गति का अभाव है। कांग्रेस ने ऐतिहासिक रूप से कुछ एससी और ओबीसी समर्थन हासिल किया है, लेकिन नेतृत्व के स्तर पर उनके प्रतिनिधित्व को संस्थागत बनाने में विफल रही है। पहचान की राजनीति में क्षेत्रीय विविधताएँ पहाड़ी और मैदानी क्षेत्रों के बीच एक स्पष्ट अंतर है पहाड़ी जिलों में, जबकि जाति की पहचान मौजूद है, यह खुले तौर पर राजनीतिकरण नहीं है। मतदाता अक्सर स्थानीय नेतृत्व, विकास के मुद्दों और व्यक्तिगत विश्वसनीयता को जाति या धर्म से अधिक प्राथमिकता देते हैं। मैदानी इलाकों में, विशेष रूप से हरिद्वार और उधम सिंह नगर में, धर्म और जाति मतदाता पहचान के लिए केंद्रीय हो जाते हैं युवाओं में पहचान के प्रति जागरूक मतदान का उदय फील्ड साक्षात्कारों से पता चलता है कि युवा मतदाताओं में जाति और समुदाय के प्रति जागरूकता बढ़ रही है, खासकर मैदानी इलाकों में। जबकि कुछ विकास संबंधी बयानबाजी और डिजिटल अभियानों से प्रभावित होते हैं, कई अभी भी पारंपरिक पहचान के आधार पर मतदान करते हैं। जाति-आधारित छात्र संघों, सोशल मीडिया कथाओं और स्थानीय प्रभावशाली लोगों के माध्यम से राजनीतिक समाजीकरण इस व्यवहार को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व के लिए निहितार्थ हाशिए पर पड़ी जातियों और समुदायों, खासकर मुसलमानों और ओबीसी को राजनीतिक सत्ता से बाहर रखा जाना उत्तराखंड में लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व के बारे में गंभीर सवाल उठाता है। यह पार्टी प्रणालियों, चुनावी लामबंदी और शासन प्राथमिकताओं में संरचनात्मक पूर्वाग्रह को दर्शाता है। अगर इस पर ध्यान नहीं दिया गया, तो यह असंतुलन लंबे समय में राजनीतिक अलगाव और सामाजिक अशांति को बढ़ा सकता है।

निष्कर्ष

उत्तराखंड का राजनीतिक परिदृश्य, हालांकि अक्सर विकास और पर्यावरण संबंधी चिंताओं के आख्यानो से प्रभावित होता है, लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं है कि जाति और धार्मिक पहचानों की शक्तिशाली अंतर्धाराओं द्वारा इसे आकार दिया जाता है। यह अध्ययन इस बात को गंभीरता से उजागर करता है कि कैसे जाति और धर्म राज्य में राजनीतिक प्रतिनिधित्व, मतदाता व्यवहार और पार्टी की रणनीतियों पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालते रहते हैं। एक प्रमुख निष्कर्ष चुनावी प्रतिनिधित्व और राजनीतिक नेतृत्व दोनों में उच्च जाति समूहों, विशेष रूप से ब्राह्मणों और राजपूतों का प्रभुत्व है। राज्य की आधी से भी कम आबादी होने के बावजूद विधान सभा में उनका अधिक प्रतिनिधित्व सामाजिक-राजनीतिक पदानुक्रम की स्थायी विरासत को रेखांकित करता है। इसके विपरीत, अनुसूचित जाति, अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी) और मुस्लिम - हालांकि संख्यात्मक रूप से पर्याप्त हैं - राजनीतिक प्रक्रियाओं में व्यवस्थित रूप से हाशिए पर बने हुए हैं। यह असंतुलन पार्टी उम्मीदवारों के चयन में बहिष्कार की प्रवृत्ति को उजागर करता है और सत्ता तक पहुँच में गहरी संरचनात्मक असमानताओं को प्रकट करता है। विश्लेषण यह भी दर्शाता है कि जहाँ पहाड़ी क्षेत्र स्थानीय विश्वसनीयता और विकास के आख्यानो को महत्व देते हैं, वहीं मैदानी इलाकों में सांप्रदायिक ध्रुवीकरण और जाति-आधारित लामबंदी की विशेषता बढ़ रही है। धार्मिक प्रतीकों और सांप्रदायिक बयानबाजी का जानबूझकर इस्तेमाल-खासकर भाजपा जैसी प्रमुख पार्टियों द्वारा-विभाजन और बहिष्कार की राजनीति को मजबूत किया गया है। अल्पसंख्यक समुदाय, खास तौर पर मुस्लिम, सबसे ज्यादा प्रभावित हुए हैं, जो अक्सर खुद को सार्थक राजनीतिक प्रतिनिधित्व या हितों की सुरक्षा के बिना पाते हैं। इसके अलावा, जाति चेतना और डिजिटल प्रचार से प्रभावित युवाओं में राजनीतिक जागरूकता बढ़ रही है। फिर भी, यह जागरूकता अक्सर मुद्दों पर आधारित, समावेशी राजनीति की ओर बदलाव के बजाय पारंपरिक पहचान-आधारित वफ़ादारी को दर्शाती है। उत्तर प्रदेश जैसे पड़ोसी राज्यों के विपरीत, मजबूत क्षेत्रीय या जाति-आधारित पार्टियों की कमी, उत्तराखंड में हाशिए पर पड़े समूहों द्वारा राजनीतिक अभिव्यक्ति के लिए जगह को सीमित करती है।

संक्षेप में, इस अध्ययन में पाया गया है कि जाति और धर्म का अंतर उत्तराखंड में राजनीतिक परिणामों के लिए आकस्मिक नहीं बल्कि केंद्रीय है। वर्तमान राजनीतिक वातावरण प्रमुख समूहों का पक्षधर है और आबादी के बड़े हिस्से को निर्णय लेने और प्रतिनिधित्व से बाहर रखता है।

एक वास्तविक लोकतांत्रिक और समावेशी राजनीतिक प्रक्रिया सुनिश्चित करने के लिए, चुनावी सुधारों, समावेशी पार्टियों संरचनाओं, नागरिक शिक्षा और जमीनी स्तर पर लामबंदी की तत्काल आवश्यकता है। कम प्रतिनिधित्व वाले समुदायों से राजनीतिक भागीदारी को प्रोत्साहित करना और प्रतिनिधित्व संबंधी समानता के लिए पार्टियों को जवाबदेह बनाना धीरे-धीरे उत्तराखंड की राजनीति को एक ऐसी राजनीति में बदल सकता है जो इसके विविध सामाजिक ताने-बाने को दर्शाती है। ऐसे सचेत प्रयासों के बिना, राज्य एक ऐसी प्रणाली को कायम रखने का जोखिम उठाता है जहाँ लोकतंत्र रूप में तो मौजूद है लेकिन सार रूप में लड़खड़ाता है, जहाँ कुछ लोगों की आवाज़ें बहुतों पर हावी रहती हैं।

संदर्भ

- [1] बेतेली, ए. (2005). जाति, वर्ग और सत्ता: तंजौर गांव में स्तरीकरण के बदलते पैटर्न। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- [2] जैफरलॉट, सी. (2003)। भारत की मौन क्रांति: उत्तर भारत में निचली जातियों का उदय। कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस।
- [3] कोठारी, आर. (1970)। भारतीय राजनीति में जाति। ओरिएंट लॉन्गमैन।
- [4] राज, एस.एस. (2008)। उत्तराखंड में सांप्रदायिकता और जाति की राजनीति। जर्नल ऑफ पॉलिटिकल स्टडीज, 29(3), 132-145।
- [5] श्रीनिवास, एम.एन. (1966)। आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन। यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस।
- [6] ठाकुर, एस. (2014)। समकालीन भारत में जाति और धर्म की राजनीति: उत्तराखंड का एक केस स्टडी। जर्नल ऑफ सोशल एंड पॉलिटिकल स्टडीज, 8(2), 57-72।
- [7] वर्मा, ए. (2019)। भारत में जाति और लोकतंत्र। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।
- [8] भट्ट, आर. (2007)। उत्तराखंड: राजनीति, पहचान और विकास। सेज प्रकाशन।
- [9] पालीवाल, एस. और गुप्ता, आर. (2012)। उत्तराखंड: राज्य की राजनीति में धर्म और जाति की भूमिका। राजनीतिक अध्ययन समीक्षा, 15(1), 44-58।
- [10] चंद्रा, के. (2004)। जातीय दल क्यों सफल होते हैं: भारत में संरक्षण और जातीय जनसंख्या। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।
- [11] पांडे, जी. (2006)। भारतीय हिमालय में सांप्रदायिक पहचान का निर्माण। जातीयता और राष्ट्रवाद में अध्ययन, 9(2), 35-52।
- [12] गुप्ता, डी. (2000)। जाति की व्याख्या: समकालीन भारत की राजनीतिक अर्थव्यवस्था को समझना। ओरिएंट लॉन्गमैन।
- [13] राय, एस. (2011). समकालीन भारत में जाति और पहचान की राजनीति: उत्तराखंड का एक अध्ययन। जर्नल ऑफ साउथ एशियन स्टडीज, 22(4), 167-179.
- [14] चंद्रा, पी. (2018). भारत के पहाड़ों में धार्मिक पहचान और राजनीति: उत्तराखंड का मामला। इंडियन जर्नल ऑफ पॉलिटिकल साइंस, 79(1), 88-102.
- [15] कुमार, ए. (2017). चुनावी राजनीति और पहचान: उत्तराखंड में जाति और धर्म। इंडियन पॉलिटिकल साइंस रिव्यू, 12(3), 112-126.